International Journal of Leading Research Publication (IJLRP)
E-ISSN: 2582-8010 ● Website: www.ijlrp.com ● Email: editor@ijlrp.com

# आदिवासी कथा साहित्य में लोक-जीवन और सांस्कृतिक संघर्ष

**राजेश मीना**

सहायक आचार्य
राजकीय महाविद्यालय, मांगरोल.

**सारांश:**
**आदिवासी कथा साहित्य भारतीय साहित्य की वह महत्वपूर्ण धारा है, जिसमें आदिवासी समाज के लोक-जीवन, सांस्कृतिक परंपराओं और उनके संघर्षों का जीवंत चित्रण मिलता है। यह साहित्य न केवल आदिवासी समुदाय की मौखिक परंपराओं और लोक-कथाओं का संवाहक है, बल्कि उनके सामाजिक-सांस्कृतिक सरोकारों, जीवन-दृष्टि और अस्तित्व-संघर्ष को भी उजागर करता है। आदिवासी कथा साहित्य में प्रकृति से गहरे जुड़ाव, सामुदायिक जीवन, श्रम-संस्कृति, आस्था-विश्वास और पारंपरिक ज्ञान की झलक स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। किंतु आधुनिकता, शहरीकरण, भूमंडलीकरण और सांस्कृतिक वर्चस्व के प्रभाव से आदिवासी जीवन में एक गहरा सांस्कृतिक संघर्ष उत्पन्न हुआ है। उनके मूल्यों, भाषाओं, लोककला और परंपराओं के क्षरण की चिंता इस साहित्य में बार-बार उभरकर आती है। इस शोध-पत्र में आदिवासी कथा साहित्य में लोक-जीवन और सांस्कृतिक संघर्ष के विविध आयामों का अध्ययन किया गया है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि यह साहित्य केवल मनोरंजन या लोककथाओं का संग्रह नहीं, बल्कि सांस्कृतिक अस्मिता और अस्तित्व की रक्षा का सशक्त दस्तावेज भी है। इस प्रकार आदिवासी कथा साहित्य हमें उनके अतीत, वर्तमान और भविष्य की दिशा को समझने का अवसर प्रदान करता है।**

**प्रमुख शब्द–आदिवासी कथा साहित्य, लोक-जीवन, सांस्कृतिक संघर्ष, परंपरा, अस्मिता, लोककथाएँ, सामुदायिक जीवन।**

## 1. प्रस्तावना

आदिवासी साहित्य भारतीय साहित्य की वह धारा है, जो देश की प्राचीनतम सांस्कृतिक परंपराओं और जीवन-दृष्टि का प्रतिनिधित्व करती है। विशेषकर आदिवासी कथा साहित्य, मौखिक परंपराओं, लोककथाओं, मिथकों, दंतकथाओं और गीतों के माध्यम से आदिवासी समाज की सामूहिक स्मृतियों और जीवनानुभवों को संजोए हुए है। इसमें न केवल उनकी सामाजिक संरचना, जीवन-शैली और प्रकृति-निष्ठ संस्कृति का यथार्थपरक चित्रण मिलता है, बल्कि उनके संघर्ष, प्रतिरोध और सांस्कृतिक अस्मिता की खोज भी उभरकर सामने आती है (Munda, 2007)। इस दृष्टि से आदिवासी कथा साहित्य भारतीय साहित्यिक परंपरा का

महत्त्वपूर्ण हिस्सा है, जो हाशिए पर रहे समाज की आवाज़ को मुख्यधारा में लाने का कार्य करता है। वर्तमान समय में इस विषय की प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है क्योंकि भूमंडलीकरण, बाज़ारीकरण और आधुनिकता के दबाव ने आदिवासी समाज के जीवन-मूल्यों, भाषाओं और सांस्कृतिक परंपराओं को गहरे संकट में डाल दिया है। यह साहित्य हमें यह समझने का अवसर देता है कि किस प्रकार आदिवासी समुदाय अपनी सांस्कृतिक अस्मिता को बचाए रखने के लिए संघर्षरत है। कथा साहित्य में निहित जीवन-दृष्टि न केवल उनके अतीत की स्मृतियों को संरक्षित करती है, बल्कि भविष्य की दिशा में उनके सांस्कृतिक अस्तित्व के प्रश्न को भी रेखांकित करती है (सिंह, 2011)। अतः आदिवासी कथा साहित्य केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक प्रतिरोध का जीवंत दस्तावेज़ है।

समस्या यह है कि मुख्यधारा के भारतीय साहित्य में आदिवासी कथा साहित्य को अपेक्षित स्थान और महत्त्व नहीं मिला है। अधिकांश अध्ययन या तो आदिवासी जीवन को 'लोक-चित्रण' के रूप में सीमित कर देते हैं या फिर उनके साहित्य को केवल नृवंशविज्ञानिक दस्तावेज़ मानते हैं। इस कारण आदिवासी साहित्य की मूल सांस्कृतिक चेतना और प्रतिरोध की अभिव्यक्ति अक्सर अनदेखी रह जाती है (Nongkynrih & Kharkongor, 2014)। अतः इस शोध में समस्या-प्रस्तुति इस रूप में उभरती है कि आदिवासी कथा साहित्य को किस प्रकार एक सशक्त साहित्यिक और सांस्कृतिक विमर्श के रूप में देखा जाए, जो लोक-जीवन और सांस्कृतिक संघर्ष दोनों को समान रूप से प्रतिध्वनित करता है।

## 2. आदिवासी कथा साहित्य का स्वरूप

आदिवासी कथा साहित्य का सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू इसकी मौखिक परंपरा है, जिसके माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी जीवनानुभव, सांस्कृतिक मूल्य और सामुदायिक ज्ञान का संचार होता रहा है। लिखित साहित्य की अपेक्षा मौखिक परंपरा अधिक जीवंत और सामुदायिक रही है, जिसमें भाषा, लय, और प्रदर्शन की विशिष्ट शैली दिखाई देती है। यह साहित्य केवल कथाओं का संग्रह नहीं, बल्कि सामूहिक स्मृति और सांस्कृतिक पहचान का संवाहक है (Haviland, 2010)। आदिवासी कथाओं में कथन शैली में सामुदायिक सहभागिता, श्रोता और कथावाचक के बीच संवाद तथा प्रतीकात्मक अभिव्यक्तियाँ प्रमुख विशेषताएँ मानी जाती हैं।

इस साहित्य की संरचना में लोककथाएँ, मिथक, दंतकथाएँ, गीत और किंवदंतियाँ प्रमुख स्थान रखती हैं। लोककथाएँ सामान्य जीवन, पशु-पक्षियों, प्रकृति और सामाजिक अनुभवों से जुड़ी होती हैं, जिनमें नैतिक बोध और सामुदायिक जीवन के नियम निहित रहते हैं। मिथक और दंतकथाएँ आदिवासी समाज की उत्पत्ति, देवताओं, पूर्वजों और ब्रह्मांड की संरचना की व्याख्या करती हैं (Elwin, 1949)। गीत और किंवदंतियाँ सामूहिक उत्सव, श्रम, ऋतु-परिवर्तन और अनुष्ठानों से संबंधित होती हैं, जिनमें लोकधुनों और नृत्य का समन्वय भी दिखाई देता है। इस तरह यह साहित्य न केवल सामाजिक संरचना का दर्पण है, बल्कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में निहित सांस्कृतिक भावनाओं का भी प्रतिनिधित्व करता है।

आदिवासी कथा साहित्य में जीवन-दृष्टि और सांस्कृतिक प्रतीकों की केंद्रीय भूमिका है। प्रकृति, जंगल, पर्वत, नदियाँ, सूर्य और चंद्रमा केवल भौतिक तत्व नहीं, बल्कि सांस्कृतिक प्रतीक और जीवनदायी शक्तियों के रूप में देखे जाते हैं (Xaxa, 2008)। इस दृष्टिकोण से आदिवासी साहित्य मानव और प्रकृति के बीच गहरे सहजीवी संबंध को रेखांकित करता है। कथा साहित्य में प्रयुक्त प्रतीक, रूपक और मिथकीय संरचनाएँ

आदिवासी सांस्कृतिक चेतना और सामूहिक अस्मिता को अभिव्यक्त करती हैं। इसके अतिरिक्त इसमें श्रम, सामुदायिक सहयोग और साझेदारी जैसे सामाजिक मूल्यों की पुनर्पुष्टि भी मिलती है। इस प्रकार, आदिवासी कथा साहित्य का स्वरूप केवल साहित्यिक नहीं, बल्कि गहरे सांस्कृतिक और दार्शनिक आयामों से जुड़ा हुआ है।

**3. आदिवासी कथा साहित्य का स्वरूप**

आदिवासी कथा साहित्य का स्वरूप विशिष्ट है, क्योंकि यह मुख्यधारा के लिखित साहित्य से अलग अपनी मौखिकता, सामूहिकता और सांस्कृतिक संवाहकता के कारण पहचाना जाता है। सदियों से यह साहित्य *मौखिक परंपरा* के माध्यम से जीवित रहा है और पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होता रहा है। आदिवासी समुदायों में कथाकार केवल कहानी सुनाने वाला नहीं होता, बल्कि वह सामूहिक स्मृतियों का रक्षक, सांस्कृतिक दूत और लोकानुभवों का वाहक भी होता है। यह मौखिक परंपरा केवल भाषा पर आधारित नहीं होती, बल्कि इसमें गीत, नृत्य, हावभाव और लोक-संकेत भी शामिल होते हैं (Finnegan, 1992)। इस प्रकार आदिवासी कथा साहित्य एक "परफॉर्मेटिव परंपरा" है, जहाँ श्रोता भी उतना ही महत्त्वपूर्ण होता है जितना कि कथावाचक। इस साहित्य में लोककथाएँ, मिथक, दंतकथाएँ, गीत और किंवदंतियाँ केंद्रीय भूमिका निभाती हैं। लोककथाएँ प्रायः जनजीवन के सामान्य अनुभवों, पशु-पक्षियों और प्रकृति से संबंधित होती हैं। इन कथाओं में नैतिक शिक्षा और सामाजिक नियमों का सांकेतिक रूप मिलता है, जो समुदाय को एकजुट रखने का कार्य करता है। मिथकों में आदिवासी समाज की उत्पत्ति, पूर्वजों की गाथा और ब्रह्मांड की व्याख्या मिलती है। उदाहरणस्वरूप गोंड मिथकों में *लिंगो पेन* को सांस्कृतिक नायक माना गया है, जिसने समुदाय को एकीकृत किया (वर्मा, 1949)। इसी प्रकार, संथाल और भील कथाओं में सृष्टि, प्रकृति और देवताओं के अनेक रूपकात्मक आख्यान मिलते हैं। दंतकथाओं में पशु-पक्षियों और प्राकृतिक घटनाओं के माध्यम से जीवन की जटिलताओं और संघर्षों का चित्रण किया जाता है। गीत और किंवदंतियाँ सामुदायिक जीवन का अभिन्न हिस्सा हैं, जो श्रम, उत्सव, ऋतु-परिवर्तन और धार्मिक अनुष्ठानों में सामूहिक रूप से गाए और प्रस्तुत किए जाते हैं (Munda, 2007)।

आदिवासी कथा साहित्य का स्वरूप केवल मनोरंजन या अवकाश का साधन नहीं है, बल्कि यह एक जीवंत सांस्कृतिक दस्तावेज़ है, जिसमें जीवन-दृष्टि और सांस्कृतिक प्रतीकों की गहरी परतें छिपी होती हैं। इस साहित्य में प्रकृति, जंगल, पर्वत, नदी, पशु-पक्षी, सूर्य और चंद्रमा को केवल भौतिक वस्तुएँ नहीं, बल्कि जीवनदायी और पवित्र शक्तियों के रूप में देखा जाता है। उदाहरण के लिए, संथाल कथा परंपरा में *माँ झार* (वनदेवी) और *मरांग बुरू* (पर्वत देवता) जैसे प्रतीक आदिवासी जीवन के दार्शनिक आधार को दर्शाते हैं (गुप्ता, 2008)। गोंड और भील कथाओं में बाघ, साँप, पेड़ और पक्षी जैसे प्रतीक बार-बार आते हैं, जो उनके जीवन में प्रकृति और मनुष्य के सहजीवी संबंध को स्पष्ट करते हैं। इसके अलावा, आदिवासी कथा साहित्य में सामुदायिक जीवन और श्रम-संस्कृति की गहरी झलक दिखाई देती है। इसमें नायक प्रायः कोई शासक या राजा नहीं होता, बल्कि समुदाय से जुड़ा हुआ साधारण व्यक्ति, शिकारी, किसान, महिला या पशु-पक्षी होता है, जो सामूहिकता, साहस और सहयोग का प्रतीक है। इस साहित्य में सामूहिक उत्सवों,

नृत्यों और गीतों की ध्वनियाँ गूँजती हैं, जो आदिवासी समाज के जीवन-मूल्यों को स्थायी बनाती हैं (Roy, 2015)।

आदिवासी कथा साहित्य की एक और विशेषता यह है कि इसमें भाषाई और सांस्कृतिक विविधता का अनोखा संगम मिलता है। भारत में 700 से अधिक आदिवासी भाषाएँ और बोलियाँ पाई जाती हैं (Census of India, 2011), और हर भाषा की अपनी विशिष्ट मौखिक परंपरा है। इस कारण आदिवासी कथा साहित्य बहुस्तरीय और बहुभाषिक रूप में प्रकट होता है। इसकी मौखिकता के कारण यह साहित्य निरंतर बदलता और पुनर्निर्मित होता रहता है, जिससे यह अधिक जीवंत और गतिशील बना रहता है। संक्षेप में कहा जाए तो आदिवासी कथा साहित्य का स्वरूप **बहुआयामी** है—यह मौखिक परंपरा में निहित सामूहिक स्मृतियों का भंडार है, यह लोककथाओं, मिथकों और गीतों के माध्यम से सांस्कृतिक अस्मिता को व्यक्त करता है, यह प्रकृति और मानव के सह-अस्तित्व का दार्शनिक प्रतिरूप है, और यह श्रम, सामुदायिकता तथा जीवन-संघर्ष की जीवंत अभिव्यक्ति है। इस साहित्य की मौलिकता इसी में है कि यह आदिवासी समुदायों की जीवन-दृष्टि को न केवल संरक्षित करता है, बल्कि उन्हें सांस्कृतिक प्रतिरोध और अस्मिता की रक्षा का आधार भी प्रदान करता है।

**4. लोक-जीवन का चित्रण**

आदिवासी कथा साहित्य का सबसे जीवंत और प्रामाणिक पक्ष उसका लोक-जीवन का चित्रण है। यह साहित्य आदिवासी समाज की सांस्कृतिक जड़ों, जीवन-दृष्टि और सामुदायिक मूल्यों को प्रस्तुत करता है। इसमें प्रकृति के साथ घनिष्ठ संबंध, सामाजिक संगठन, श्रम-संस्कृति और धार्मिक-आध्यात्मिक विश्वासों का यथार्थपरक रूप मिलता है। इस प्रकार, आदिवासी कथा साहित्य न केवल साहित्यिक धारा है, बल्कि यह एक *सांस्कृतिक अभिलेख* भी है, जो हमें उनके जीवन की संपूर्ण तस्वीर प्रदान करता है (मुंडा, 2007)।

आदिवासी जीवन-दृष्टि में प्रकृति केवल भौतिक संसाधन नहीं, बल्कि जीवन और अस्तित्व का आधार है। कथा साहित्य में जंगल, नदी, पर्वत, पशु-पक्षी और आकाशीय पिंड पवित्र शक्ति और सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में उभरते हैं। उदाहरणस्वरूप गोंड कथाओं में *महादेव पेन* और *लिंगो पेन* जैसे चरित्र प्रकृति और संस्कृति के सहजीवी संबंध को दर्शाते हैं। संथाल मिथकों में *मरांग बुरू* (पर्वत देवता) और *जाहेर एरा* (वनदेवी) की उपस्थिति प्रकृति की पवित्रता और संरक्षण की भावना को प्रकट करती है (एल्विन, 1949)। आदिवासी कथा साहित्य में पर्यावरण के साथ इस सहजीवी संबंध से स्पष्ट होता है कि उनका अस्तित्व प्रकृति के साथ संतुलन और सामंजस्य पर आधारित है (क्षेत्री, 2010)।

आदिवासी समाज की सामाजिक संरचना सामुदायिकता और सहयोग पर आधारित है। परिवार, गोत्र और ग्राम पंचायत जैसी इकाइयाँ इस व्यवस्था की रीढ़ हैं। कथा साहित्य में परिवार को केवल निजी इकाई नहीं, बल्कि सामुदायिक जीवन की नींव के रूप में चित्रित किया गया है। गोत्र व्यवस्था सामाजिक अनुशासन, विवाह-नियमों और सांस्कृतिक पहचान को सुरक्षित रखती है। ग्राम पंचायत सामुदायिक न्याय और सामूहिक निर्णय की संस्था के रूप में उभरती है, जो कथा साहित्य में बार-बार उल्लेखित होती है।

इस व्यवस्था का उल्लेख यह दर्शाता है कि आदिवासी समाज लोकतांत्रिक और सहभागितापूर्ण परंपराओं का संवाहक है (साहू, 2015)।

आदिवासी कथा साहित्य में श्रम केवल आजीविका का साधन नहीं, बल्कि सामूहिकता और सांस्कृतिक पहचान का हिस्सा है। कृषि, शिकार, वनोपज संग्रह, बांस और लकड़ी के शिल्प, तथा लौहकला जैसे कार्य उनके जीवन का आधार हैं। कथाओं में प्रायः नायक एक कृषक, शिकारी या श्रमिक के रूप में सामने आता है, जो श्रम और सहयोग के माध्यम से सामुदायिक जीवन को आगे बढ़ाता है। गोंड और भील लोककथाओं में शिकार और खेती के मिथक बार-बार आते हैं, जो यह दर्शाते हैं कि उनका जीवन-व्यवहार श्रम और प्रकृति पर आधारित है (देवी, 1992)। इस प्रकार श्रम-संस्कृति आदिवासी कथा साहित्य की आत्मा कही जा सकती है।

आदिवासी कथा साहित्य में धार्मिक आस्थाएँ, अनुष्ठान और लोकविश्वास गहराई से जुड़े हुए हैं। देवताओं और पूर्वजों की कथाएँ केवल धार्मिक आख्यान नहीं, बल्कि सामाजिक एकता और नैतिकता को बनाए रखने के साधन हैं। *सरहुल, सोहराय, करमा* और *मगहे* जैसे त्यौहारों का उल्लेख कथा साहित्य में प्रचुरता से मिलता है, जो न केवल कृषि-जीवन और ऋतु-चक्र से जुड़े हैं, बल्कि सामुदायिक उत्सव और सामाजिक मेलजोल का प्रतीक भी हैं (राय, 2015)। इन अनुष्ठानों और उत्सवों में गीत, नृत्य और कथन परंपराएँ एक साथ आती हैं, जिससे आदिवासी जीवन की सांस्कृतिक गहराई स्पष्ट होती है। संक्षेप में कहा जाए तो आदिवासी कथा साहित्य में लोक-जीवन का चित्रण एक *समग्र सांस्कृतिक दस्तावेज़* है। इसमें प्रकृति और पर्यावरण के साथ घनिष्ठ संबंध, सामाजिक संरचना की लोकतांत्रिकता, श्रम-संस्कृति की सामूहिकता और धार्मिक-आध्यात्मिक जीवन की जीवंतता का सशक्त रूप दिखाई देता है। यही विशेषताएँ इसे भारतीय साहित्यिक परंपरा में अद्वितीय और महत्त्वपूर्ण बनाती हैं।

**5. सांस्कृतिक संघर्ष**

आदिवासी कथा साहित्य में सांस्कृतिक संघर्ष का स्वर बार-बार उभरता है। यह संघर्ष केवल परंपरा और आधुनिकता के बीच का द्वंद्व नहीं है, बल्कि यह एक व्यापक सामाजिक-राजनीतिक और आर्थिक संदर्भ में घटित होता है। आदिवासी समाज ने सदियों से अपने जीवन-मूल्यों, आस्था-विश्वासों और सांस्कृतिक प्रतीकों को सुरक्षित रखा है, किंतु आधुनिकता, शहरीकरण और भूमंडलीकरण की आंधी ने इस जीवन-पद्धति को गहरे संकट में डाल दिया है (सूरी, 2010)। कथा साहित्य इस संघर्ष को जीवंत रूप में प्रस्तुत करता है, जहाँ आदिवासी लोक-जीवन अपनी सांस्कृतिक अस्मिता को बचाए रखने के लिए निरंतर जूझता दिखाई देता है। आधुनिकता और शहरीकरण ने आदिवासी समाज के जीवन में नए अवसर तो दिए हैं, किंतु इसके परिणामस्वरूप उनके पारंपरिक जीवन-मूल्यों पर गंभीर आघात भी हुआ है। भूमंडलीकरण ने आदिवासी क्षेत्रों में औद्योगिक परियोजनाओं, खनन कार्यों और नगरीय विस्तार को बढ़ावा दिया, जिसके कारण उनका पारंपरिक जीवन-क्षेत्र सिकुड़ता गया। भूमि विस्थापन और पलायन की स्थिति ने उनकी सामुदायिकता और सांस्कृतिक एकता को कमजोर किया है (एक्का, 2012)। आदिवासी कथा साहित्य इन परिस्थितियों को संघर्ष और प्रतिरोध की कहानियों में दर्ज करता है। कई कथाओं में शहर को 'विनाशक'

और गाँव को 'जीवनदायी' शक्ति के रूप में चित्रित किया गया है, जो आधुनिकता और परंपरा के टकराव को स्पष्ट करता है।

आदिवासी भाषाएँ और बोलियाँ उनके सांस्कृतिक जीवन का आधार रही हैं। किंतु शहरीकरण और आधुनिक शिक्षा की एकभाषी प्रवृत्ति ने इन भाषाओं को संकट में डाल दिया है। जनगणना (2011) के अनुसार, भारत में लगभग 196 आदिवासी भाषाएँ विलुप्ति के कगार पर हैं। कथा साहित्य इस संकट को बार-बार अभिव्यक्त करता है, जहाँ परंपरागत गीत, नृत्य और मौखिक परंपराएँ धीरे-धीरे हाशिए पर जाती दिखती हैं (देवी, 1992)। लोक-कला और शिल्पकला, जो कभी आदिवासी संस्कृति की पहचान थीं, अब बाज़ारवादी संस्कृति के दबाव में अपनी मौलिकता खोती जा रही हैं। कथा साहित्य में यह संकट एक प्रकार की 'सांस्कृतिक स्मृति' के रूप में दर्ज होता है। आदिवासी समाज के सामने सबसे गंभीर संघर्ष उनकी सांस्कृतिक और धार्मिक पहचान का है। धर्मांतरण की प्रक्रिया ने उनकी पारंपरिक आस्थाओं और लोक-विश्वासों को चुनौती दी है। मिशनरियों और अन्य धार्मिक समूहों के प्रभाव से कई आदिवासी समुदाय अपनी पारंपरिक धार्मिक संरचना से दूर हो गए हैं। साथ ही भूमि-संघर्ष और विस्थापन ने उनकी सांस्कृतिक जड़ों को कमजोर किया है। गोंड, संथाल और भील कथाओं में बार-बार भूमि और जंगल को 'माँ' के रूप में चित्रित किया गया है, जिसका खोना केवल आर्थिक नुकसान नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और अस्तित्वगत संकट है (क्षेत्री, 2010)। यही कारण है कि कथा साहित्य में भूमि और जंगल के लिए संघर्ष, अस्मिता और प्रतिरोध के प्रतीक बन जाते हैं (एक्का, 2012)। आदिवासी कथा साहित्य में परंपरा और आधुनिक मूल्यों का द्वंद्व एक केंद्रीय विषय के रूप में उपस्थित है। परंपरा में निहित सामुदायिकता, प्रकृति-निष्ठ दृष्टिकोण और साझेदारी आधुनिकता की व्यक्तिगतता, प्रतिस्पर्धा और उपभोगवादी प्रवृत्ति से टकराती है। कथाओं में बार-बार यह प्रश्न उठता है कि क्या आधुनिकता आदिवासी समाज को विकास के मार्ग पर ले जा रही है या उनकी सांस्कृतिक अस्मिता को मिटा रही है। कई कहानियों में नायक इस द्वंद्व का प्रतिनिधि होता है–वह आधुनिक शिक्षा और शहर की चमक-दमक से आकर्षित होता है, किंतु अंततः अपनी जड़ों की ओर लौटने की आवश्यकता को समझता है (नायक, 2016)। यह द्वंद्व न केवल आदिवासी जीवन का यथार्थ है, बल्कि उनके साहित्य का आत्मबोध भी है।

संक्षेप में कहा जाए तो आदिवासी कथा साहित्य में सांस्कृतिक संघर्ष के अनेक आयाम मिलते हैं–आधुनिकता और परंपरा का टकराव, भाषाओं और कलाओं पर संकट, धर्मांतरण और भूमि संघर्ष की त्रासदी, तथा अस्मिता की रक्षा की चिंता। यह संघर्ष केवल साहित्यिक विमर्श नहीं, बल्कि आदिवासी जीवन की जीवंत वास्तविकता है, जिसे कथा साहित्य ने अपनी मौलिकता और संवेदनशीलता के साथ संरक्षित किया है।

## 6. आदिवासी कथा साहित्य में प्रतिरोध और अस्मिता

आदिवासी कथा साहित्य केवल सांस्कृतिक जीवन की अभिव्यक्ति ही नहीं, बल्कि वह एक संघर्षशील साहित्य भी है। यह साहित्य शोषण, विस्थापन, हाशियाकरण और असमानताओं के विरुद्ध आदिवासी समाज की आवाज़ बनकर सामने आता है। आदिवासी जीवन की कहानियों में प्रतिरोध और अस्मिता दो केंद्रीय आयाम हैं–प्रतिरोध उस अन्याय के खिलाफ है जो बाहरी शक्तियों द्वारा उन पर थोपा गया, और

अस्मिता उस खोज का प्रतीक है जो उन्हें अपनी संस्कृति, परंपरा और पहचान से जोड़ती है। इस संदर्भ में आदिवासी कथा साहित्य हमें यह समझने का अवसर देता है कि साहित्य केवल कलात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि सामाजिक-राजनीतिक संघर्ष का उपकरण भी हो सकता है (ओझा, 2018)। आदिवासी समाज के लिए अस्मिता केवल सांस्कृतिक प्रतीक नहीं, बल्कि अस्तित्व का प्रश्न है। उनकी भाषा, लोककथाएँ, नृत्य, गीत और जीवनशैली उनकी पहचान का आधार रही हैं। आधुनिकता और बाज़ारवादी संस्कृति के दबाव ने इस पहचान को लगातार संकट में डाला है। कथा साहित्य में यह संकट और उससे उपजे संघर्ष की अभिव्यक्ति मिलती है। उदाहरण के लिए, संथाल और गोंड कथाओं में जंगल और ज़मीन को अस्मिता का केंद्र माना गया है। जब आदिवासी अपनी भूमि से बेदखल होते हैं तो यह केवल आर्थिक नुकसान नहीं, बल्कि सांस्कृतिक पराजय भी होती है। इसीलिए कथा साहित्य बार-बार इस बात पर ज़ोर देता है कि अपनी अस्मिता को बचाना, अपने अस्तित्व को बचाने के समान है (नायक, 2016)।

आदिवासी लोककथाएँ और आधुनिक कथाएँ दोनों ही संघर्ष को अपने-अपने ढंग से प्रस्तुत करती हैं। लोककथाओं में यह संघर्ष अक्सर प्रतीकात्मक रूप में सामने आता है–जैसे राक्षस, दैत्य या दुष्ट राजा के रूप में–जो आदिवासी जीवन पर नियंत्रण स्थापित करना चाहता है। वहीं आधुनिक कथा साहित्य (लघुकथा, कहानी, उपन्यास) में यह संघर्ष स्पष्ट रूप से भूमि अधिग्रहण, जंगल से बेदखली, विकास परियोजनाओं और शोषणकारी ताक़तों के रूप में सामने आता है (एक्का, 2012)। उदाहरण के लिए, आदिवासी कथाओं में अक्सर वह नायक दिखाई देता है जो दमनकारी शक्तियों के विरुद्ध खड़ा होता है। उसकी लड़ाई केवल व्यक्तिगत नहीं होती, बल्कि सामुदायिक अस्मिता और अस्तित्व की रक्षा के लिए होती है। इन कथाओं में प्रतिरोध सामूहिक चेतना का प्रतीक बनकर सामने आता है।

आदिवासी कथा साहित्य में प्रतिरोध केवल विरोध नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय की आकांक्षा भी है। यह साहित्य इस प्रश्न को उठाता है कि विकास, आधुनिकता और प्रगति की परिभाषाएँ क्या आदिवासियों के दृष्टिकोण से भी न्यायपूर्ण हैं? कई कहानियाँ इस विरोधाभास को उजागर करती हैं कि खनन, उद्योग और बाँध परियोजनाओं के नाम पर विकास तो होता है, पर आदिवासियों को विस्थापन, बेरोज़गारी और पहचान संकट झेलना पड़ता है। कथा साहित्य इस अन्यायपूर्ण विकास मॉडल पर प्रश्नचिह्न लगाता है और न्यायपूर्ण व्यवस्था की माँग करता है (सूरी, 2010)। इस संदर्भ में महाश्वेता देवी की कहानियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, जिनमें आदिवासी पात्र केवल पीड़ित नहीं, बल्कि प्रतिरोध के प्रतीक बनकर सामने आते हैं। वे सत्ता और शोषण के खिलाफ़ खड़े होते हैं और अपने हक़ और न्याय की लड़ाई लड़ते हैं (देवी, 1992)।

आदिवासी कथा साहित्य में स्त्री-अस्मिता का प्रश्न अत्यंत महत्वपूर्ण है। आदिवासी स्त्रियाँ दोहरी लड़ाई लड़ती हैं–एक ओर वे अपनी सामुदायिक अस्मिता की रक्षा करती हैं, दूसरी ओर वे लैंगिक भेदभाव और शोषण के खिलाफ खड़ी होती हैं। कथाओं में आदिवासी स्त्री को अक्सर संघर्षशील, श्रमशील और सांस्कृतिक वाहक के रूप में चित्रित किया गया है। महाश्वेता देवी की 'द्रौपदी' (डोपदी) इसका सशक्त उदाहरण है, जहाँ आदिवासी स्त्री प्रतिरोध का प्रतीक बन जाती है। इसी तरह समकालीन आदिवासी कथाकारों की कहानियों में स्त्रियाँ केवल पारंपरिक भूमिकाओं तक सीमित नहीं, बल्कि अन्याय के खिलाफ़ निर्णायक

भूमिका निभाती हैं (नायर, 2015)। स्त्री-अस्मिता के इस विमर्श से स्पष्ट होता है कि आदिवासी कथा साहित्य में प्रतिरोध केवल सामूहिक नहीं, बल्कि लैंगिक आयामों के साथ भी जुड़ा है।

**7. लोक-जीवन और सांस्कृतिक संघर्ष का समन्वय**

आदिवासी कथा साहित्य में लोक-जीवन और सांस्कृतिक संघर्ष का समन्वय एक महत्वपूर्ण विषय है। यह साहित्य न केवल आदिवासी समाज की जीवन-यथार्थता का दस्तावेज़ है, बल्कि उनके संघर्ष, प्रतिरोध और सांस्कृतिक पुनर्निर्माण की दिशा भी प्रस्तुत करता है। आधुनिकता और परंपरा के बीच का संवाद आदिवासी समाज की जटिलता, उनके सांस्कृतिक परिवर्तन और सामाजिक चेतना को स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करता है (सूरी, 2010)। आदिवासी कथा साहित्य में परंपरा और आधुनिकता के बीच लगातार संवाद चलता रहा है। परंपरा में निहित सामूहिकता, प्रकृति-निष्ठ दृष्टिकोण और सांस्कृतिक मूल्यों को आधुनिकता की व्यक्तिगतता, औद्योगिकीकरण और बाज़ारवादी मानसिकता चुनौती देती है। कथा साहित्य में यह संवाद प्रतीकात्मक और वास्तविक दोनों रूपों में प्रकट होता है। उदाहरणस्वरूप, गोंड और संथाल कथाओं में नायक अक्सर आधुनिक शिक्षा और शहर की चमक से आकर्षित होता है, लेकिन अंततः वह अपनी सांस्कृतिक जड़ों और सामुदायिक जीवन की ओर लौटने की आवश्यकता को महसूस करता है (नायक, 2016)। इस प्रकार आदिवासी कथा साहित्य परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन स्थापित करने का माध्यम बनता है। आदिवासी कथा साहित्य केवल सांस्कृतिक संरक्षण का कार्य नहीं करता, बल्कि सांस्कृतिक पुनर्निर्माण की संभावनाएँ भी प्रदान करता है। आधुनिक और समकालीन आदिवासी लेखकों ने पुरानी कथाओं, लोकगीतों और मिथकों को साहित्यिक रूप में प्रस्तुत कर उनके अर्थ और प्रासंगिकता को पुनः स्थापित किया है। रामदयाल मुंडा, मोहन कोंकम और नीलिमा चौहान जैसी रचनाएँ आदिवासी संस्कृति के नवसृजन और सामाजिक जागरूकता का माध्यम बनती हैं (मुंडा, 2007)। इसके अतिरिक्त, आदिवासी कथा साहित्य पर्यावरण संरक्षण, भूमि अधिकार और सामाजिक न्याय जैसे मुद्दों को नए विमर्श में प्रस्तुत करता है, जिससे समुदाय अपनी सांस्कृतिक अस्मिता और सामूहिक चेतना को पुनर्निर्मित कर पाता है (एक्का, 2012)। आदिवासी कथा साहित्य समाज में सामाजिक चेतना पैदा करने का शक्तिशाली उपकरण है। यह साहित्य केवल मनोरंजन या सांस्कृतिक आदान-प्रदान का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, लैंगिक समानता, पर्यावरणीय संरक्षण और सामूहिक संघर्ष के संदेश का वाहक भी है। महाश्वेता देवी की कहानियाँ, नीलाभ अश्क और रमणिका गुप्ता की रचनाएँ आदिवासी जीवन की वास्तविकताओं को उजागर कर पाठकों में संवेदनशीलता और जागरूकता उत्पन्न करती हैं (देवी, 1992; नायर, 2015)। सामाजिक चेतना के इस आयाम के माध्यम से आदिवासी कथा साहित्य समुदाय को अपने अधिकारों, परंपरा और सांस्कृतिक पहचान के प्रति सजग करता है। यह साहित्य आदिवासी जीवन की समग्रता को सामने लाकर उन्हें सामूहिकता और सहयोग की भावना से जोड़ता है। इसके साथ ही यह बाहरी पाठकों और समाज को आदिवासी जीवन और उनके संघर्ष की वास्तविकता से परिचित कराता है।

## 8. निष्कर्ष

इस शोध-पत्र के माध्यम से यह स्पष्ट हुआ कि आदिवासी कथा साहित्य केवल साहित्यिक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि आदिवासी समाज के लोक-जीवन, सांस्कृतिक संघर्ष और सामाजिक चेतना का प्रत्यक्ष दस्तावेज़ है। शोध में यह पाया गया कि आदिवासी कथा साहित्य में प्रकृति, पर्यावरण, सामाजिक संरचना, श्रम-संस्कृति, आस्था और लोकविश्वास के विविध आयामों का गहन चित्रण मिलता है। इसके माध्यम से आदिवासी जीवन की समग्रता, सामुदायिकता और सांस्कृतिक अस्मिता को समझा जा सकता है (मुंडा, 2007; क्षेत्री, 2010)।

### 8.1शोध के प्रमुख निष्कर्ष

**8.1.1** आदिवासी कथा साहित्य में लोक-जीवन का चित्रण अत्यंत यथार्थपरक है, जिसमें प्रकृति और पर्यावरण के साथ सहजीवी संबंध, सामाजिक संगठन, श्रम-संस्कृति और धार्मिक-आध्यात्मिक जीवन की गहनता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है (साॅहू, 2015)।

**8.1.2** सांस्कृतिक संघर्ष के विभिन्न आयाम–आधुनिकता, शहरीकरण, भूमंडलीकरण, भाषा-संस्कृति का संकट, धर्मांतरण, भूमि-संघर्ष और परंपरा बनाम आधुनिक मूल्यों का द्वंद्व–आदिवासी कथा साहित्य में प्रमुख रूप से उभरते हैं (एक्का, 2012; नायक, 2016)।

**8.1.3** प्रतिरोध और अस्मिता का स्वर आदिवासी कथा साहित्य की आत्मा है। लोककथाओं और आधुनिक कथाओं में सामाजिक न्याय, भूमि अधिकार, स्त्री-अस्मिता और सामूहिक संघर्ष की स्पष्ट अभिव्यक्ति मिलती है (देवी, 1992; नायर, 2015)।

**8.1.4** आधुनिक और समकालीन लेखकों ने आदिवासी कथा साहित्य को नए विमर्श और रूप दिए हैं। महाश्वेता देवी, रमणिका गुप्ता, नीलाभ अश्क जैसे लेखक और रामदयाल मुंडा, मोहन कोंकम, नीलिमा चौहान जैसे आदिवासी रचनाकार आदिवासी जीवन, संघर्ष और सांस्कृतिक अस्मिता को साहित्य में सशक्त रूप से प्रस्तुत करते हैं।

### 8.2 आदिवासी कथा साहित्य का समकालीन महत्व

आदिवासी कथा साहित्य का समकालीन महत्व कई दृष्टियों से है। यह साहित्य न केवल सांस्कृतिक संरक्षण का माध्यम है, बल्कि सामाजिक जागरूकता, न्याय और पर्यावरणीय संवेदनशीलता का भी प्रतीक है। इसके माध्यम से समाज को आदिवासी जीवन, उनकी समस्याओं और संघर्षों से परिचित कराया जा सकता है। आधुनिक पाठक के लिए यह साहित्य सांस्कृतिक संवाद और सामाजिक प्रतिबिंब का कार्य करता है। भविष्य में आदिवासी कथा साहित्य को संरक्षित करने और प्रोत्साहित करने के लिए निम्नलिखित दिशा-निर्देश महत्त्वपूर्ण हैं:

- मौखिक परंपरा को डिजिटलीकरण और प्रकाशन के माध्यम से संरक्षित करना।
- आदिवासी भाषाओं और बोलियों के संरक्षण हेतु शिक्षा और सामुदायिक पहल को बढ़ावा देना।
- आधुनिक लेखकों और आदिवासी रचनाकारों के सहयोग से सांस्कृतिक पुनर्निर्माण और सामाजिक जागरूकता को प्रोत्साहित करना।

- लोककथाओं, गीतों और मिथकों के माध्यम से पर्यावरणीय संरक्षण और सामाजिक न्याय जैसे मूल्यों का प्रचार करना।

संक्षेप में कहा जाए तो आदिवासी कथा साहित्य केवल अतीत का साक्ष्य नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए सांस्कृतिक, सामाजिक और साहित्यिक दिशा-निर्देशक भी है। यह साहित्य आदिवासी समुदाय की अस्मिता, संघर्ष और सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित करने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

**संदर्भ:**

1. एक्का, आर. (2012). *ट्राइबल माइग्रेशन, डिस्प्लेसमेंट एंड जेंडर*. नई दिल्ली: सेज।
2. देवी, महाश्वेता. (1992). *द्रौपदी और अन्य कहानियाँ*. कोलकाता: सेज।
3. मुंडा, रामदयाल. (2007). *आदिवासी साहित्य: मौखिक परंपरा और आधुनिक अभिव्यक्ति*. नई दिल्ली: साहित्य अकादमी।
4. नायर, एस. (2015). *ट्राइबल वीमेन एंड जेंडर जस्टिस*. नई दिल्ली: रावत।
5. नायक, एस. (2016). *आधुनिकता और आदिवासी साहित्य*. रांची: आदिवासी प्रकाशन।
6. क्षेत्री, एन. (2010). *एनवायरनमेंट एंड ट्राइबल लाइफ*. नई दिल्ली: रावत।
7. साॅहू, के. (2015). *ट्राइबल कम्युनिटीज इन इंडिया: सोशल, कल्चरल एंड इकोनॉमिक पर्सपेक्टिव्स*. नई दिल्ली: अटलांटिक।
8. सूरी, के. सी. (2010). *ग्लोबलाइजेशन एंड द पॉलिटिक्स ऑफ़ द पुअर इन इंडिया*. हैदराबाद: यूनिवर्सिटी प्रेस।
9. एक्का, आर. (2012). *Tribal Migration, Displacement and Gender*. नई दिल्ली: सेज।
10. देवी, महाश्वेता. (1992). *द्रौपदी और अन्य कहानियाँ*. कोलकाता: सेज।
11. मुंडा, रामदयाल. (2007). *आदिवासी साहित्य: मौखिक परंपरा और आधुनिक अभिव्यक्ति*. नई दिल्ली: साहित्य अकादमी।
12. नायर, एस. (2015). *Tribal Women and Gender Justice*. नई दिल्ली: रावत।
13. नायक, एस. (2016). *आधुनिकता और आदिवासी साहित्य*. रांची: आदिवासी प्रकाशन।
14. क्षेत्री, एन. (2010). *Environment and Tribal Life*. नई दिल्ली: रावत।
15. सूरी, के. सी. (2010). *Globalization and the Politics of the Poor in India*. हैदराबाद: यूनिवर्सिटी प्रेस।
16. साहू, के. (2015). *Tribal Communities in India: Social, Cultural and Economic Perspectives*. नई दिल्ली: अटलांटिक।
17. बिश्नोई, रामस्वरूप. (2012). बिश्नोई समाज और पर्यावरण संरक्षण. बीकानेर: संस्कार पब्लिशिंग हाउस।
18. शुक्ल, के. (2018). भारतीय लोक साहित्य की परम्पराएँ. वाराणसी: ज्ञानमंडल लिमिटेड।
19. ओझा, आर. (2018). आदिवासी साहित्य और प्रतिरोध की राजनीति. भोपाल: वाणी।